International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(2): 51-53

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(2): 51-53
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 26-01-2016
Accepted: 27-02-2016

बिपन शर्मा
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभागः
जम्मू विश्वविद्यालयः जम्मू।

Correspondence
बिपन शर्मा
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभागः
जम्मू विश्वविद्यालयः जम्मू।

व्यवहारशास्त्र में वर्णित 'भृत्य' के अधिकारों का विवेचन

बिपन शर्मा

प्राचीनकाल राज्य की शासन व्यवस्था मुख्यतः भृत्यों पर आधारित थी। अतः राजा को गुणसम्पन्न व्यक्तियों को ही विभिन्न प्रशासकीय पद पर नियुक्त करने का आदेश दिया गया है। [1] देश का प्रशासन स्वभावतः बहुमुखी होता है, अतएव राजतन्त्र में भी अकेला राजा सम्पूर्ण प्रशासन को नहीं चला सकता; उसे अनिवार्य रूप से सहायों की आवश्यकता होती है। [2] राजा स्वयं स्वेच्छाचारी बनकर अनीति के मार्ग पर न चलने लग जाए, इसलिए भी योग्य एवं प्रभावशाली सहायों की आवश्यकता है। धर्मसूत्रों में उनके महत्त्व एवं उनकी स्थिति का इसी बात से अनुमान किया जा सकता है कि आपस्तम्ब धर्मसूत्र राजा को निर्देश देता है कि वह अपने गुरुओं और अमात्यों से बढ़कर न रहे। [3] महाभारत में राजकर्मचारियों के महत्त्व को स्पष्टतः व्यक्त किया गया है, उनके अनुसार सहायकों के बिना राजा न शासन कर सकता है और न किसी अर्थ की प्राप्ति। यदि अर्थ की प्राप्ति हो भी गयी तो उसकी रक्षा असम्भव है। अतएव गुणसम्पन्न भृत्यों की नियुक्ति नितान्त आवश्यक है। [4] व्यवहारशास्त्रों में विशिष्ट पदाधिकारियों के गुणों का तो उल्लेख किया ही गया है, कुछ ऐसे गुणों का भी उल्लेख है जो राज्य के समस्त कर्मचारियों में अपेक्षित थे। साधारणतया कुलीन, जितेन्द्रिय, मधुरभाषी, शुचियुक्त, विनीत, ज्ञान–शक्ति सम्पन्न, कर्त्तव्यपरायण, पवित्राचारी, परोपकारी, राजा एवं राज्य के प्रति अनुरक्त व्यक्तियों को ही राजकीय सेवा का अधिकारी माना गया है। [5] इस सम्बन्ध में मनु का कथन है कि राजधर्म में तत्पर होकर व्यवहार करता हुआ राजा लोक हितकर कार्यो में समस्त भृत्यों को नियुक्त करें। [6] वर्तमान में भी विभिन्न राजकीय कार्यालयों में कर्मचारियों को नियुक्ति करते समय इन सम्पूर्ण गुणों का परीक्षण किया जाता है।

विभिन्न कार्यों में नियुक्त किये कर्मचारियों की निष्ठा को बनाए रखने के उपायों में अच्छा वेतन, पदोन्नति, स्थानान्तरण, पुरस्कार, अवकाश, पदच्युति, पदमुक्ति आदि अनेक अधिकार शामिल थे ताकि वे अभाव पर प्रलोभनों से परे रहते हुए अपने कर्त्तव्यों का पूर्ण क्षमता से निर्वाह करे।

वेतन (Salary)

भृत्यों को कार्य करने के अनुरूप वेतन प्राप्त करने के अधिकार का वर्णन प्राप्त होते है। इस सम्बन्ध में हमें अनेक नियम प्राप्त होते हैं। भृत्यों की नियुक्ति से पहले ही वेतन निश्चित किया जाता था, परन्तु उसमें कमी या बढ़ोतरी के संशोधन का विधान निहित रहता था। इस संशोधन का आधार भृत्य की कार्य दक्षता होती थी। यदि नौकर द्वारा कार्य सम्पादित करने में कमी हो जाए तो वेतन कम और दूसरी ओर लाभ में अधिक वेतन दिया जाता था। [7] कार्य की समान स्थिति में पूर्व निश्चित वेतन ही स्वीकार कर लिया जाता था। यदि वेतन पहले से निश्चित न हो तो व्यापार, गोपालन व कृषि कार्य में संलग्न सेवक व प्रतिनिधि को क्रमशः व्यापार में होने वाले लाभ का, दूध और अन्न का दशम भाग मिलता था। [8] पूर्व निश्चित वेतन के अनुरूप एक दिन, एक पक्ष, एक मास या अधिक समय तक के लिए भृत्यों की नियुक्तियाँ की जाती थी। वेतन अन्न या नकद सिक्कतों के रूप में दिया जाता था। गोपालकों को वेतन के रूप में दुगध या गोओं को बछड़े सहित देने की परम्परा रही थी। [9] वेतन कार्य आरम्भ करने से पूर्व, कार्य के मध्य में, कार्य सम्पादन के पश्चात् जैसा भी नियोजन उचित समझता था, उसी प्रकार दिया जाता था। [10] उद्योग पर्व में वेतन निर्धारित करने का आधार व्यक्त किया गया है। भृत्यों का वेतन उनकी योग्यता, कार्य एवं राजकीय आय–व्यय को दृष्टि में रखकर निर्धारित करना चाहिए। [11] पारिश्रमिक कार्य करते समय पारिश्रमिक सम्बन्धी उपकरणों की सुरक्षा का उत्तरदायित्व श्रमिक पर होता है। उपकरण खो जाने या नष्ट होने पर उपकरण के मूल्य के बराबर धन की कटौती श्रमिक के वेतन से कर ली जाती थी। [12] वेतन की इच्छा से ही कर्मचारीवृन्द राजकीय सेवा का कार्य करते हैं। शुक्र ने तीन प्रकार के वेतन भोगियो की चर्चा की है। कार्य माना (कार्य के परिणाम के अनुसार दी जाने वाली), काल माना (काल के अनुसार दी जाने वाली) एवं कार्य कालमिति (कार्य एवं काल दोनों के अनुसार दी जाने वाली)। वेतन की मात्रा और आवश्यकता में परस्पर संबंध स्थापित

करते हुए तीन प्रकार के वेतन की चर्चा की है। जिस वेतन से केवल अपना ही भरण पोषण हो उसे 'हीना'; जिससे पोषण करने योग्य एवं माता–पिता के अतिरिक्त अन्य परिजनों का भी भरण–पोषण हो सके 'मध्या'; अवश्य पोषण एवं माता पिता के अतिरिक्त अन्य परिजनों का भी जिससे भरण–पोषण हो सके उसे 'श्रेष्ठ' एवं जिससे मात्र अन्न वस्त्र आदि की पूर्ति हो उसे आचार्य शुक्र में 'समा' भृति कहा हैं। कर्मचारी की योग्यता में जैसे–जैसे वृद्धि होती जाय वैसे–वैसे उसके वेतन में भी वृद्धि और वेतन समय पर दिया जाना चाहिए एवं वेतन मे कमी नहीं होनी चाहिए क्योंकि हीन भृति के कारण अवश्यकताओं की पूर्ति न होने से कर्मचारी राजकीय कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्यों में लग जाते हैं। [13] स्वस्थ प्रशासन हेतु राजकीय कर्मचारियों के वेतन के महत्त्व को कौटिल्य ने पूर्ण रूप से समझा है। उनके द्वारा विभिन्न स्तरों के अधिकारियों के वेतन क्रम निश्चित कर दिए गए थे। सामान्यतः राजस्व का एक चौथाई भाग वेतनों पर खर्च किया जाता था। वेतन 48 हजार पण से लेकर 60 पण वार्षिक हो सकता था। जो कर्मचारियों की श्रेणी पर निर्भर करता था। [14]

पदोन्नति (Promotion)

किसी विभाग में नियुक्त कर्मचारी यदि अपने कार्य को सदैव त्रुटि रहित कुशलता पूर्वक सम्पन्न करे तो उसे उसके पद से प्रोन्नत करना चाहिए। व्यवहार शास्त्र में कर्मचारी के पदोन्नति सम्बन्धी अधिकार का वर्णन हमें प्राप्त होता है। शुक्राचार्य के विचार से यथाक्रम न्याय से सदाचारी एवं सुयोग्य पदाधिकारियों को पदोन्नति मिलनी चाहिए। अव्यवहित निम्नपदस्थ व्यक्ति को उच्चपद पर पदोन्नति अवश्य देनी चाहिए। यह पदोन्नति कर्मठ पदाधिकारी को तब तक मिलनी चाहिए जब तक वह प्रधान पुरुष के पद पर न पहुँच जाए। [15]

स्थातान्तरण (Transfer)

बहुत दिनों तक प्रभुत्वसम्पन्न पद पर एक व्यक्ति को नहीं देना चाहिए, क्योंकि प्रभुता का मद पीकर कौन प्रमत्त नहीं हो जाता है? कर्मचारियों के लिए उनके स्थानान्तरण की भी व्यवस्था व्यवहारशास्त्रों में निर्दिष्ट है। जब कर्मचारी के लिए कोई काम शेष नहीं रह जाता, तो उसकी छंटनी नहीं की जानी चाहिए बल्कि उनका स्थानान्तरण करके उन्हें राजकीय भवनों, दुर्गों तथा राज्य रक्षा की देखभाल के काम पर नियुक्त करना चाहिए। शुक्राचार्य के अनुसार राजा तीन, पाँच, सात या अधिकतम दस सल में पदाधिकारियों की कार्यक्षमता देखकर उन्हें स्थानान्तरित कर दे। राजासदा एक व्यक्ति को, चाहे वह कोई भी हो, एक स्थान पर अधिक दिनों तक कार्य न करने दे। उसकी कार्य कुशलता के अनुरूप उसे स्थानान्तरित करता रहे कार्यक्षम व्यक्ति को कार्यान्तर में स्थानान्तरण कर देना चाहिए। [16]

अवकाश (Leave)

भृत्यों को अवकाश देने का भी उल्लेख प्राप्त होता है। अगर सेवक को अवश्यक कार्य आ जाए, स्वास्थ्य ठीक न हो या किसी आपत्ति में फंस गया हो तो वह इन सब कारणों से आकस्मिक छुट्टी ले सकता है। [17] आचार्य शुक्र का मत है कि सेवकों को अपने घर के काम के लिए दिन में एक पहर और रात में तीन पहर की छुट्टी होनी चाहिए। दैनिक वेतन भोगी सेवक को डेढ़ पहर की छुट्टी दी जानी चाहिए। [18] बीमारी की अवस्था में राजसेवक एक साल की छुट्टी ले सकता है। [19] व्यवहार ग्रन्थों द्वारा प्रतिपादित आकस्मिक अवकाश की अवधारणा आधुनिक राज्य द्वारा पूर्ण मान्यता प्राप्त कर चुकी है। प्रत्येक कर्मचारी को वर्ष भर में अपने कार्यों को सम्पन्न करने के लिए निश्चित संख्या में आकस्मिक अवकाश, चिकित्सा अवकाश आदि ले सकने का अधिकार प्रदान किया गया है।

पदच्युति (Discharge)

"प्रजाशतेन सन्दिृष्टं सन्त्यजेधिकारिणम्" [20]

किसी भी पदाधिकारी को अपने कार्य में असावधान पाने पर या उनकी योग्यता सिद्ध हो जाने पर उन्हें पदच्युत करने का आदेश भी व्यवहार ग्रन्थों में दिया गया है। यदि एक सौ प्रजा एक साथ मिलकर किसी अधिकार के विरुद्ध आवेदनपत्र भेजे तो उस पदाधिकारी को पदच्युत कर देना चाहिए। यदि किसी कर्मचारी का आचरण निन्दनीय हो तथा सत्याचरण, परोपकार तथा आज्ञापालन – इन तीनों गुणों से रहित हो तथा जो कर्मचारी हिंसक प्रवृत्ति के हो तथा मिथ्या भाषा करे, उसे भी पदच्युत कर देना चाहिए। [21] इस संदर्भ अर्थशास्त्र और रामायण भी समर्थ करते है कि स्वामी के कार्यों में प्रमाद करने वाले राजकर्मचारी की उनके पद से च्युत कर देना चाहिए। [22] महाभारत में एक महत्त्वपूर्ण नियम का उल्लेख मिलता है कि किसी भी कर्मचारी को तब तक सेवा के निवृत नहीं करना चाहिए जब तक उसका प्रमाण भली भाँति प्रमाणित न हो जाए। [23]

पदमुक्ति (Retirement)

यदि कार्य सम्पन्नता में शिथिलता आ जाय या कर्मचारी बूढ़ा हो जाय तो उसे अवकाश ग्रहण करा दे और उसकी अवश्यकता की सम्पूर्ति हेतु उसके लिए अवकाश वृत्ति (च्मदेपवद) की व्यवस्था कर दे। उसकी जगह सुयोग्य व्यक्ति को उस पद पर स्थापित कर दे। यदि अवकाश प्राप्त कर्मचारी का पुत्र उस कार्य के लिए सक्षम हो तो उन्हें पिता के पद पर नियुक्त कर लेना चाहिए। [24] आचार्य कौटिल्य ने भी ऐसे उदार नियमों का पालन किया जिससे कर्मचारियों का अपनी सेवाओं के प्रति आकर्षण बढ़ जाता था। कर्मचारियों के लिए पेंशन व्यवस्था का निर्देश दिया हुआ है। यदि कोई कर्मचारी कार्य के दौरान मर जाता था तो उसके पुत्र तथा पत्नी को राज्य की ओर से भरण–पोषण के लिए वेतन मिलता था। मृत कर्मचारी पर आश्रित रोगियों पर विशेष अनुग्रह रखा जाता था। उनकी समय–समय पर हर प्रकार से सहायता की जाती थी। [25]

दण्ड

यदि भृत्य अपने कर्त्तव्य में लापरवाही बरते, अथवा किसी प्रकार का अपराध करे तो उसके साथ कठोरता बरतनी चाहिए। ऐसे भृत्यों के लिए व्यवहार शास्त्र में अनेक प्रकार के दण्ड का विधान किया गया है। निमयों को स्वीकार कर उनका पालन न करने वाला भृत्य दण्ड का भागी होता था। कार्य प्रारम्भ करके, प्रतिज्ञा करके भी कार्य को मध्य में ही छोड़ने वाले को परिश्रम के फल से वंचित कर देने का दण्ड दिया जाता था। [26] किसी शुम्भ कार्य को करने का परामर्श कर फिर लोभ में आकर कार्य का सम्पादन न करने के कारण राज्य से निष्कासित करने का दण्ड या चारसौ पण का निष्क्रय दण्ड देने का आदेश मनु ने दिया है। [27] कौटिल्य का मत है कि राजकीय कार्यलयों में कार्यरत अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा सहायक कर्मचारी यदि राजकीय सामग्री की चोरी करे तो उन्हें क्रमशः एक पण, दो पण तथा चार पण से दण्डित करना चाहिए और अगर भृत्य वर्ग इस प्रकार का पुनः अपराध करे तो उन्हें क्रमशः प्रथम साहस (250 पण), मध्य साहस (500 पण), उत्तम साहस (1000 पण) से, यहाँ तक कि प्राण दण्ड से भी दण्डित कर देना चाहिए। [28]

पुरस्कार

जो पदाधिकारी या कर्मचारी अपने दायित्व का निर्वाह कर लेता है, उसे प्रोत्साहित करने के लिए समय–समय पुरस्कार की व्यवस्था करनी चाहिए। शुक्र के अनुसार कर्मचारी द्वारा उत्कृष्ट पराक्रम सम्बन्धी काम किये जाने पर उन्हें योग्य पारितोषिक रूप से धन तथा अधिकार प्रदान करने चाहिए। [29] महाभारत में भी उत्तम कार्य सम्पादित करने वाले भृत्य को पुरस्कृत करने के नियम प्राप्त होते है। [30]

निष्कर्ष में हम यह कह सकते है शासन व्यवस्था को सुचारू ढंग से चलाने के लिए अनेक गुण सम्पन्न भृत्यों की नियुक्ति के साथ–साथ विभिन्न कार्यों में निष्ठा बनाए रखने के लिए वेतन, पदोन्नति, अवकाश, पुरस्कार इत्यादि अनेक अधिकारों का वर्णन व्यवहार शास्त्रों में प्राप्त होता है। प्राचीन समय के सम्मान पत्रों, उपाधियों, पदोन्नति की भाँति वर्तमान में भी विशेष सम्मान, पुरस्कार एवं पदोन्नति द्वारा कर्मचारियों की मानवृद्धि की जाती है, जिससे हमें ज्ञात होता है कि वेतन, स्थानान्तरण, अवकाश आदि अधिकार वर्तमान में भी प्रासङ्गिक है।

संदर्भ ग्रन्थ–सूची

1. महाभारत, शान्ति पर्व, 116/13
2. अपि यत्सुकरं कर्म तदप्येकेन दुष्करम्।
   विशेषतोऽसहायेन किंतु राज्यं महोदयम्।। मनुस्मृति 7/55
3. गरूनमात्यांश्च नातिजीवत्। आपस्तम्बधर्मसूत्र 2/10/25/10
4. महाभारत, शान्ति पर्व, 94/26
5. शुक्रनीति 2/57–66; अ० पु० 95/38–39; महाभारत शान्ति पर्व 119/18
6. एवं चरान् सदायुक्तो राजधर्मेषु पार्थिवः।
   हितेषु चैव लोकस्य सर्वान्भृत्यान्नियोजयेत्।। मनुस्मृति 9/324
7. याज्ञवल्क्य स्मृति 2/195
8. नारद स्मृति 9/3; कौ० अ० 3/13; याज्ञवल्क्य स्मृति 2/194
9. स्मृति चन्द्रिका, पृ० 196
10. नारदस्मृति 9/2
11. महा० भा०, उद्यो० 38/24
12. याज्ञवल्क्य स्मृति 2/193, नारदस्मृति 9/4
13. शुक्र नी० 2/391–400
14. कौटिल्यकालीन आर्थिक चिन्तन, पृ० 165
15. शुक्रनीति 2/115; कौटिल्य अर्थशास्त्र 2/9/1
16. शुक्रनीति 2/112–113; कौटिल्य अर्थशास्त्र 5/3/26
17. अशक्तः कुत्सिते कर्मणि व्याधौ व्यसने वा अनुशयं लभेत,
    परेण वा कारयितुम्। कौटिल्य अर्थशास्त्र 3/1413
18. शुक्रनीति 2/404
19. शुक्रनीति 2/408
20. शुक्रनीति 2/377
21. शुक्रनीति 1/177, 111–114
22. कौटिल्य अर्थशास्त्र 2/9/10, 39; वा० रा० 6/51/16–18, महा० भा० उद्योग० 3724
23. महा० भा०, सभा० 5/63
24. शुक्रनीति 22/115
25. कौटिल्य अर्थशास्त्र 5/3/28–30
26. मनुस्मृति 8/156
27. मनुस्मृति 8/220
28. कौटिल्य अर्थशास्त्र 2/5/18
29. शुक्रनीति 4/366
30. शान्ति पर्व 57/25